International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 972-974

नयी कविता में नवीन मानव–संस्कृति

डॉ0 सुमित्रा चौधरी[1], सुनीता रानी[2]
[1] एसोसिएट पो0, हिंदी विभाग, ओ0पी0जे0एस0 विश्वविद्यालय, राजस्थान।
[2] शोधार्थी, हिंदी विभाग, ओ0पी0जे0एस0 विश्वविद्यालय, राजस्थान।

प्रस्तावना

छायावाद के मानव–विषयक जिस दृष्टिकोण को विस्थापित करने या बदलने की प्रतिक्रिया में उपर्युक्त दो मानववादी दृष्टिकोण उभरकर सामने आये, उनका यहां संक्षेप रूप में परिचय पा लेना संदर्भ–सापेक्ष है। वस्तुत अज्ञेय जी का मानना है कि ''प्रसाद और महादेवी छायावाद का प्रतिनिधित्व करते हैं, इसलिए कि उनमें छायावाद बोलता है – वह छायावाद जो कि एक सामाजिक परिवृत्ति में और नैतिक सामाजिक प्रतिमानों की एक विशेष अवस्था में सारे सांस्कृतिक जीवन में प्रकट हुआ है।'' [1] अज्ञेय जी का मानना है कि छायावाद की मूल–प्रेरणा भारत की ही सांस्कृतिक परंपरा में नीहित है और इसे न मानने का कोई कारण ही नहीं है। उन्नीसवीं सदी के अंतिम दशक में स्वामी विवेकानन्द जी ने सारी दुनिया के सामने भारतीय चिंतन, ऋषियों की निष्कृतियों और वेदों के विचारों को सशक्त रूप में रखकर यह सिद्ध किया कि भारतीय वेदांत–चिंतन और पाश्चात्य वैज्ञानिक उपलब्धियों के समन्वय से नयी मानव–संस्कृति की स्थापना करना आधुनिक युग के लिए मंगलमय होगी।

सुप्त मानव को समर्थ और सक्षम बनाने की अनेक प्रकार से याचना की गई है –

भाई सूरज
जरा इस आदमी को जगाओ!
भई पवन
जरा इस आदमी को हिलाओ! [2]

इस संदर्भ में 'मानव–मूल्य' की व्याख्या अपनी व्यक्तिगत चिंतन भूमि अर्थात् 'अस्तित्ववादी चिंतन' में पहुंच गयी है। डॉ0 भारती ने इससे पहले जो कुछ भी कहा था वह इस अस्तित्ववादी नये मानववाद की भूमिका थी। कर्म करना चाहिए फल चाहे जैसा मिले –

'यदि है नियति पूर्व गति–निश्चित–चलित घूर्णित चक्र
तब क्या चिन्ता? रहे भाग्य की रेखा रजु या वक्र।'' [3]

बीसवीं सदी के पहले दशक में महर्षि अरविंद जोकि पाश्चात्य चिंतन एवं वैज्ञानिक सिद्धातों से पूरी तरह से परिचित थे ने इसी दृष्टिकोण को समसामयिक विश्व–जीवन के लिए उपादेय निरूपित किया।

आज उस नयी मानवता की स्थापना करना आध्यात्मिकता और भौतिकता के समन्वित बोध से ही संभव है जो संकट के इस कठिन समय में अपने कल्याण का मार्ग ढूंढ़ने में समर्थ हो सकती है। अरविंद ने आधुनिक वैज्ञानिक संदर्भों से स्वामी विवेकानंद के दर्शन को जोड़कर अपनी व्यक्तिगत तपस्या और आत्मानुभूति से उसमें प्राण फूंक दिए। आस्था द्वारा आहूत होने पर ब्रह्म साधक की आत्मा को अपने में आहूत कर लेने के लिए तुरन्त दौड़ पड़ता है –

यदि कहीं निकट से तुम लेते आवहान को,
मानस से निकले भक्ति–भरति आख्यान को।
तो नंगे पैरों दौड़, छोड़ शिरत्राण को,
वे सब प्रकार साधते भक्त कल्याण को।। [4]

पश्चिमी चिंतको द्वारा 'जीवन–प्रवाह' का जो मत प्रस्तुत किया है वह भी मान्य है कि मानव–जीवन एक गति है, एक धारा है। जीवन के प्रति पूर्ण आस्था है। परम्परावादी लोग जिन यथार्थ जीवनगत सत्यों को देखकर नाक–भौं सिकोड़ते हैं, मुक्तिबोध के लिए वही वरण्य है –

मैं तुम लोगों से इतना दूर हूं
मेरी प्रेरणा से तुम्हारी प्रेरणा इतनी भिन्न है
कि जो तुम्हारे लिए विश है, मेरे लिये अन्त है। [5]

जीवन के प्रति मुक्तिबोध की कितनी अदम्य आस्था है, इसका अनुमान निम्नलिखित पंक्तियों से लगाया जा सकता है। यहाँ उन्होंने अपने सहधर्मियों और सहकर्मियों को भटकन में भी राह पाने की आशा दिलाई है –

''मेरी सलाह है
लुढ़को (मैं देता हूँ धक्का, गति और वेग)
लुढ़कते चले जाओ
और उस गहनतल भूमि में अपना
पाओ विस्तार।'' [6]

'हम नदी के द्वीप हैं।' नदी जीवन–प्रवाह है और व्यक्ति का क्षण–जीवन द्वीप है। एक क्षण का व्यक्तित्व दूसरे क्षण से अलग होता है, परंतु क्रमिकता–निरंतरता के कारण ये क्षण जीवनधारा को प्रवाहमान रखते हुए बनते व मिटते रहते हैं। अज्ञेयजी का 'मूल्य–बोध' या नैतिक–बोध मानवीय अस्तित्व के ऐसे बोध से जुड़ा हुआ है। इस जीवन–धारा में क्षण का समर्पण स्थायी प्रकृति है; क्योंकि क्षण अपने समर्पण द्वारा ही जीवन–धारा की निरंतरता या गतिको बनाये रखने में अपने दायित्व का निर्वाह कर सकता है, और यही दायित्व–बोध उसका मूल्य–बोध या नैतिक–बोध होता है। उसकी नयी मानववादी संवेदना इसी से जुड़ी हुई रहती है। क्षण में जीने वाला व्यक्ति अपने विवेक द्वारा 'स्वतंत्र वरण' करता है और

भावी क्षण–प्रवाह को गतिमान करके अर्थवत्ता प्राप्त करता है। अपनी उपर्युक्त पुस्तक में डॉ0 भारती ने जहां 'नये मानववाद' को पाश्चात्य अस्तित्ववादियों किर्केगार्ड, यास्पर्स मार्सल और सार्त्र के चिंतन से जोड़ा है, वहीं अज्ञेयजी की निम्नलिखित पंक्तियां प्रस्तुत की हैं :

'यह द्वीप अकेला स्नेह भरा
है गर्व भर मदमाता, पर
इसको भी पंक्ति को दे दो।'

कवि विरह गीत की अन्तिम पंक्तियों में इसी विश्वास से परम प्रियतम को पुकारता है –

बिना तुम्हारे यह दुख–दुर्गति, दूर नहीं होगी प्यारे।
आओ, आओ, मुझ व्यथिता की, अंधी आँखों के तारे।।
इस अधीर उर के आश्वासन, आओ मेरे अवलम्बन।
ताप–तप्त इस अन्तर्मन के, आ जाओ शीतल चन्दन।। [7]

बुनियादी तौर पर स्वामी विवेकानंद और महर्षि अरविंद के चितन से एक मत रहते हुए गांधीजी के विचारों में राजनैतिक चुनौतियों के कारण ऐसे तत्त्वों का होना आवश्यक ही था, जो सामयिक संदर्भ में उपयुक्त रहे, लेकिन गांधीजी के चिंतन का मूल आधार भी वही था जोकि विवेकानंद और अरविंद का था। इसलिए छायावाद–युग की मुख्य प्रेरणा अरविंद, विवेकानंद और तिलक तथा कुछ हद तक जहां तक राजनीति की बात है गांधी के विचारों की रही। छायावाद–युग में क्रियाशील पर उसकी स्वच्छंदतावादी प्रवृत्ति से अलग चलते हुए समर्थ कथाकार प्रेमचंद ने समय–समय पर गांधीजी के विचारों की आलोचना भी की लेकिन फिर भी समीक्षक प्रेमचंद पर गांधीवादी प्रभाव देखते हैं। जयंशकर 'प्रसाद' ने अपनी काव्य रचना 'कामायनी' में 'मनु' नामक पात्र के प्रति 'श्रद्धा' से यह कहलवाया है कि जो हिसंक है, उन पर शस्त्र उठाना कोई पाप नहीं, परंतु जो हिंसक नहीं उसे क्यों मारा जाये ? संस्कृति–बोध की अंतिम काव्यकृति 'कामायनी' है जो कि स्वामी विवेकानंद, महर्षि अरविंद तथा तिलक से अनुप्रेरित है, उपर्युक्त दोनों मानववाद आजतक जिसके विरोध में खड़े हैं। 'कामायनी' में पुराने मनु की जगह एक 'नये मानव' ने ले ली है। जिस 'लाईफ डिवाइन' के अवतरण की घोषणा महर्षि अरविंद ने की, कामायनीकार का मानव उसी का स्वप्न–बिंब है। यदि मार्क्सवाद नव मानववाद मार्क्स के चिंतन का आधार है, यदि उपर्युक्त नया मानववाद किर्केगार्ड, यास्पर्स, ग्रैबील, मार्सेल, सार्त्र व अन्य व्यक्तिगत स्वतंत्रता के दूसरे पक्षधर पश्चिमी चिंतको का आधार है तो कामायनी द्वारा स्थापित किये गये नव मानववाद के भी पुष्ट दार्शनिक आधार हैं।
विशुद्ध वेदना और विरहातुरता दृश्अि गोचर होती है –

''यह विकल विरहिणी वर्शों वर–वंचित रही,
पर मंजु मिलन की टेक सदा संचित रही।
देखे तनु, भोगे भुवन, दिशा, विदिशा यही,
पड़ भंवर जाल में कहां–कहां बिछुड़ी वही।। [8]

हम अभी इनमें से किसी एक का मूल्यांकन करने की अवस्था में नहीं हैं, लेकिन इतना तो अवश्य कहा जा सकता है कि निराला, रामधारी सिंह 'दिनकर'प्रमुख तौर पर इसी नव मानववाद के पक्षधर रहे हैं। यद्यपि कामायनी की मानव–परिकल्पना को दिनकरजी ने स्वीकार नहीं किया है, परंतु 'रश्मि रथी' में गौण स्वर में और 'परशुराम की प्रतीक्षा' में मुख्य स्वर में उसी मानव–परिकल्पना का समर्थन भी किया है। परशुराम के जिस व्यक्तित्व को दिनकरजी ने वरेण्य माना है वही आध्यात्म की शक्ति और भौतिक शक्ति या अध्यात्मिक चेतना और भौतिक चेतना की समस्वरता पर उभरने वाला मानव बिम्ब ही है। पंतजी छायावाद के एक मुख्य कवि हैं, वे छायावादी 'मानव–कल्पना' को स्वीकार न करते हुए अंत में अरविंद के दर्शन की ओर गये, परंतु उसके व्यावहारिक पक्ष को छोड़ गये। महाप्राण 'निराला', 'राम की शक्तिपूजा' तथा अपनी उत्तरकालीन अन्यरचनाओं में बुनियादी तौर पर उसी शक्ति–परिकल्पना से जुड़े रहे, महर्षि अरविंद द्वारा पुष्ट की गई थी व स्वामी विवेकानंद द्वारा निरूपित की गई थी।
दिनकर जी की मृत्यु तक छायावादी क्रांतिकारिता की यह विरासत अक्षुण्ण रही। लोकगीतकारों ने इसमें अपना योगदान तो किया परंतु पूर्व के मार्क्सवादी नव मानववाद और व्यक्ति स्वातंत्र्यपरक नये मानववाद से प्रेरित होकर जो काव्य–धाराएं निसृत हुई, उनके कारण यह धारा या तो दबी रही या उपेक्षित रही या इसका मुल्यांकन समुचित ढंग से मूल्यांकन नहीं हो पाया। पर रूमानी प्रवृत्तियां इसमें हमेशा विद्यमान रही हैं। इस विषय में अज्ञेयजी का यह मंतव्य अतिमहत्त्वपूर्ण है इसलिए उद्धरणीय है ''यह भी कहा जा सकता है कि यदि पूर्व की भावाभिव्यंजना में 'रूमानियत' मिलती थी और अब उसे तरक कर दिया गया है तो यह भी हो सकता है कि पूर्व का 'यथार्थ' जैसा रूमानियतयुक्त था वैसा आज का नहीं है।''[9]

निष्कर्ष

इस विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि छायावादोत्तर काल में उन्मेशित और हमारे आलोच्यकाल में प्रवाहित मुख्य काव्यधाराओं में तीन दृष्टियां जीवन, मानव और मानवमूल्य परिलक्षित होती हैं जिनके आधार पर तीन तरह के नव मानववाद की प्रतिष्ठा के प्रयास किये गये। पहला मार्क्सवादी नव मानववाद, दूसरा व्यक्ति–स्वातंत्र्यपरक नया मानववाद व तीसरा छायावादी क्रांतिकारिता की विरासत लेकर चलने वाला विश्व–चेतना संपन्न भारतीय नव मानववाद। आज इक्कीसवीं सदी तक आते–आते स्थिति यह है कि मार्क्सवादी नव मानववादी सृजन को व्यक्ति–स्वातंत्र्य के लिए खतरा समझकर उसका विरोध किया जाता है। व्यक्ति–स्वातंत्र्यपरक नये मानववाद पर आधारित साहित्य को प्रतिक्रियावाद एवं पूंजीवाद का प्रच्छन्न सहायक समझकर उसका निषेध किया जाता है। उसके अंदर भी बिखराव और विघटन की स्थिति पैदा हो गयी है, जिसके कारण इस तरह का सृजन समसामयिक संदर्भ में दिशा प्रदान करने में समर्थ नहीं प्रतीत होता। स्वच्छंदतावादी क्रांतिकारिता की विरासत को वहन करनेवाली काव्य–धारा आहत स्थिति में है। इसलिय यह महसूस करना सही है कि जीवन–दृष्टि–विषयक और उससे संबंधित साहित्य–सृजन की मान्यताओं का पुनः निरीक्षण, विवेचन–विश्लेषण और यदि जरूरत हो तो उसमें बदलाव करने की जरूरत दिखायी देती है।
इस दिशा में अध्ययन को आगे जारी रखने के लिए व्यक्ति–स्वातंत्र्यपरक 'नया मानववाद' के पक्ष में खड़े हिन्दी के साहित्यकारों की सृजन–सापेक्ष मानव–मूल्य–संबंधी अवधारणा पर चर्चा कर लेना अतिआवश्यक है। जहां तक मार्क्सवादी नव मानववाद से संबंधित मानव–मूल्य की बात है, उसके द्वंद्वात्मक भौतिकवादी मानव–मूल्य बहुत साफ है।

संदर्भ

1. अज्ञेय, आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृ0 39

2. वही,
3. नवीन, हम विश0 पृ0—22
4. वही, विरहिणी, पृ0—19 छनद—40
5. हिन्दी के आधुनिक कवि, पृ0—280
6. हिन्दी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि, पृ0—221
7. वही, रचना सर्गः छंद 69, पृ0— 70
8. सोम, विरह सर्ग, पृ0—85
9. अज्ञेय, आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृ0 125